BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

प्राचीन वेद पुराणों में पर्यावरण विमर्श

डॉ सरला भारद्वाज
सहायक आचार्या (भूगोल विभाग)
हर्ष विद्या मंदिर (पी.जी) कॉलेज,रायसी
हरिद्वार, उत्तराखंड
sarlabhardwaj23@gmail.com

सारांश

पर्यावरण से तात्पर्य- उन सभी बाहरी स्थितियों के योग से हैं जो मानव जीवन,विकास एवं अस्तित्व को प्रभावित करती हैं तथा प्राचीन जनजातियों से लेकर अज्ञात प्राय समुदायों में उनकी विलक्षण शैलियों के रूप में विद्यमान हैं। वर्तमान में आज मनुष्य पर्यावरण प्रदूषण की जिस समस्या से घिरा हुआ हैं। हमारे वैदिक ऋषि मुनियों ने हजारों वर्ष पहले ही वेदों में इस समस्या के लिए मानव समाज का मार्ग दर्शन किया है। जिनके अनुसार जैविक एवं अजैविक पारिस्थितिकी में पूर्ण सामंजस्य स्थापित करके ही पर्यावरण का संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सकता है। इस सामंजस्य की व्याख्या वेदों में विस्तृत रूप से की गई है। कल्याणकारी संकल्पना ,शुद्ध आचरण,निर्मल वाणी और सुनिश्चित गति ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं और पर्यावरण संरक्षण भी मुख्यतया इन्हीं विशेषताओं पर टिका हुआ है। वेदों में पृथ्वी, जल,वायु,अग्नि,आकाश आदि के प्रति असीम प्रेम को प्रकट करने पर अत्यधिक बल दिया गया है। वेदों में वैदिक काल से ही ऋषि मुनियों ने पर्यावरण के प्रति मानव को सचेत तो किया हैं साथ ही साथ उसके संरक्षण के लिए भी प्रेरित किया है।वेदों में लोक कल्याण की भावना निहित होती हैं इसलिए उन्होंने पर्यावरण सुरक्षा को धार्मिक आस्था से जोड़कर निरंतर संरक्षण एवं संवर्धन का मार्ग प्रशस्त किया है। पृथ्वी के प्रत्येक भाग में शांति की अभिव्यक्ति ही विश्व मंगल की बलवती इच्छा है,क्योंकि प्रकृति सीधी सौम्य गाय तथा रुष्ट सिंहनी दोनों ही रूप में पृथ्वी पर विद्मान है।यदि उसके साथ सामंजस्य तथा सहयोग का व्यवहार किया गया तो अनंत काल तक अपने दुग्ध रूपी संप्रदायों से हमारा पालन पोषण करेगी अन्यथा शोषण अथवा विदोहन की स्थिति में हमें मार डालने में तनिक भी संकोच नहीं करेगी ।

बीज शब्द- पर्यावरण,संरक्षण,वैदिक, संवर्धन ,वायुमंडल

प्रस्तावना

जब से पृथ्वी पर मानव का अस्तित्व में आया हैं तभी से यह माना जाता है कि प्रकृति और मनुष्य एक दूसरे के पूरक हैं तथा इन्हें एक-दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता।हमारी भारतीय संस्कृति और सभ्यता की प्राचीनतम धरोहर वेद-पुराणों में भारतीय मनीषियों की अद्यतन उपलब्ध प्रमाणों में वेदों का स्थान सर्वोपरि है। इसलिए आधुनिक विषयों पर परिवर्तन भले ही नया दिखाई देता है परंतु उनका

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

मूल स्वरूप बीज रूप में हमें वेदों से ही प्राप्त हुआ है। **परस्परोपग्रहोरू जीवानाम का अर्थ** - परस्पर+उप+ग्रह+जीवानाम् ,**परस्पर**-- अर्थात एक दूसरे के प्रति/ आपस में, **उपग्रह** – उपकार करना / एक दूसरे को कुछ प्रदान करना और एक दूसरे से कुछ ग्रहण करना,**जीवानाम्**-- जीवों का/ प्राणियों का /जीवधारियों का **अर्थात्** जीवधारियों या प्राणियों पर परस्पर उपकार करना ही जीवन का साधन है|(1) कहने का आशय यह है कि इस जगत् में समस्त जीव-जन्तु या जीवधारी (स्थूल एवं सूक्ष्म) आपस में एक दूसरे को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कुछ न कुछ आदान-प्रदान करते हैं और उनसे कुछ ग्रहण भी करते हैं |अर्थात सृष्टि का प्रत्येक जीव की उत्पत्ति एक दुसरे के हितार्थ हुई हैं न कि एक दूसरे को हानि पहुंचाने के लिए । वन्य जीव एवं पर्यावरण की उपयोगिता के कारण इनका संरक्षण भारतीय संस्कृति का विशिष्ट और अभिन्न अंग है। हिंदू धर्म के सबसे प्राचीन ग्रंथ हमारे वेद-पुराण तथा उपनिषद ही है। जिसमे प्रत्येक स्थान पर पृथ्वी को प्रकृति से विरासत में मिली सभी वस्तुओं का जीवन से गहरा जुड़ाव मिलता है तथा इन सभी को अत्यंत पवित्र मानकर लोग प्राचीन काल से इनकी पूजा अर्चना भी करते आ रहे हैं। अथर्ववेद में ऋषियों ने मानव जीवन के विकास के लिए शुद्ध तथा समृद्ध पर्यावरण को महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य बताया है। **आप: यानि** जल,**वात**:यानि वायु, **औषधय**:**वनस्पति** अर्थात पेड़ पौधे इन सभी ने इस संसार को आच्छादित कर रखा है। प्रकृति के प्रत्येक कण-कण में एक ऐसी शक्ति विद्यमान है जो मानव एवं वन्यजीवों की रक्षा करती है। बात चाहे पर्यावरण की हो अथवा वन्य जीव संरक्षण की वैदिक साहित्य में इसके अनेको प्रमाण देखने को मिलते हैं। ऋग्वेद में पृथ्वी को माता तथा आकाश को पिता कहा गया हैं तो इसका अर्थ हैं कि वह संपूर्ण पारिस्थितिकी के संरक्षण की अप्रत्यक्ष प्रेरणा देते हैं तथा यजुर्वेद में पृथ्वी, जल तथा औषधि की हिंसा निषेध है।इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हमे ना तो पृथ्वी के प्रति हिंसा करें और न हीं औषधीय पेड़ पौधो की।इन वेद वाक्यों से यह स्पष्ट है कि केवल पृथ्वी ही नहीं बल्कि वन की औषधि एवं वन्य प्राणियों की भी रक्षा किया जाना मानव का परम कर्तव्य है। हमारे वेद इस संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र अर्थात पृथ्वी,जल,वायु अग्नि ,आकाश को सुरक्षित करने का केवल उपदेश ही नही देते हैं बल्कि इनके संरक्षण एवं सवर्धन का प्रयत्न करने पर बल भी देते हैं। मानव जाति का आदि ग्रंथ वेद ही है। समस्त ज्ञान विज्ञानं से युक्त वेद ही धर्म का मूल हैं।वेद शब्द संस्कृत की '**विद्' धातु** से बना हैं जिसका अर्थ हैं ज्ञान या जानना। मनुस्मृति के दूसरे अध्याय में '**सर्वज्ञानमयो हि स:'** श्लोक में वेदों को सभी प्रकार के ज्ञान से युक्त बताया गया है। इसका तात्पर्य है कि हमारे जीवन का कोई भीऐसा पक्ष नहीं है जिसका दर्शन हमें वेदों से न प्राप्त हुआ हो।तीनों लोक,चारों वर्ण ,चारो आश्रम यहां तक की भूत,वर्तमान और भविष्य का ज्ञान भी वेदों के द्वारा ही संभव है।(2)

वेदों में पर्यावरण का अर्थ

वैदिक काल भारतीय इतिहास का वह काल माना जाता है, जिस काल में वेद तथा उनसे सम्बन्धित ग्रन्थों की रचना हुई थी। वैदिक काल को दो भागों में विभाजित किया गया है-

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

ऋग्वैदिक काल :

ऋग्वैदिक काल में ऋग्वेद की रचना हुई थी। **उत्तरवैदिक काल :** उत्तर वैदिक काल में सामवेद, अथर्ववेद के अतिरिक्त ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषद एवं आरण्यक की रचना भी हुई थी। वैदिक पर्यावरण दो शब्दों से बना हैं। वैदिक शब्द का अर्थ हैं वेदों से सम्बंधित या उनसे जुड़ा हुआ ।पर्यावरण शब्द परि तथा आवरण दो शब्दों के मेल से बना है।जिसमें **परि** का अर्थ है- चारों ओर तथा आवरण का अर्थ है - आच्छादित या ढका हुआ अथवा घिरा हुआ अर्थात **चहु ओर से वेदों से आच्छादित या वेदों में पर्यावरण** से सम्बंधित बातों से हैं।आदि ग्रंथ वेदों में मानव जीवन के कल्याण के लिए पर्यावरण को स्वच्छ एवं सुंदर बनाने की बात कही गई है। प्राचीन वैदिक वेदांगो में हमें पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के लिए प्रेरित व सचेत तो किया ही हैं साथ-साथ पर्यावरण के मूल घटक के रूप में उपस्थित पांच तत्वों में देवत्व का दर्शन भी कराया गया है।वेदों में इन पांच तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश) को प्रदूषण रहित बनाने के लिए,इनके संरक्षण एवं संवर्धन के लिए अनेक विद्याएं एवं सूक्तियां के माध्यम से उपासना भी की गयी हैं। विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से प्रारंभ करें तो हमें ज्ञात होता है कि वैदिक ऋषि मुनियों ने प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को ही विभिन्न देवताओं के नाम से संबोधित कर सुंदर-सुंदर स्तुतियों से उनकी उपासना की है।ऋग्वेद ही नहीं बल्कि संपूर्ण वैदिक साहित्य प्रकृति के विभिन्न बिंदुओं का गुणगान करते हैं।प्रकृति के लिए विभिन्न रूप देवताओं के स्वरूप में उभरते हैं। इन देवताओं का लीला क्षेत्र पृथ्वी ,अंतरिक्ष तथा गौलोक है यद्पि वैदिक काल से सृष्टि साम्यावस्था में तो थी पर्यावरण की समस्या से ग्रसित नहीं थी,परंतु मानव स्वभाव को जानने वाले ऋषियों ने वैदिक-वेदांगो में जीवन की व्याख्या इस प्रकार से की है जिससे पर्यावरण दूषित होने की समस्या उत्पन्न ही ना हो और यदि कहीं ऐसी समस्या उत्पन्न भी हो तो उनके समाधान बताने का प्रयत्न वैदिक ऋषि - मुनियों के द्वारा वेदों में महत्वपूर्ण रूप से किया गया है।वैदिक ऋषि मुनियों की सजकता और जागरूकता वैदिक साहित्य में पग-पग पर परिलक्षित होती है।यही कारण है कि वैदिक ऋषि संपूर्ण पृथ्वी को अपने माता के रूप में उद्घोषित करते हुए कहता है।**माता भूमि पुत्रों अहम पृथिव्या।**3**(अथर्ववेद 12.1.12)** अंधकार को दूर करने वाले सूर्य की स्तुति भी विभिन्न रूपों में वैदिक ऋषियों के द्वारा की गई है।सूर्य पृथ्वी के जल का शोधन करके अशुद्धियों का नाश तो करता ही है साथ ही पदार्थो की वृद्धि एवं पोषण कर्ता के रूप में महत्वपूर्ण है।सभी पदार्थों का पोषक होने के कारण उसे सविता कहा गया है।यह दृश्य एवं अदृश्य और सभी यातुधानो का नाशक है।**पुरस्तातसूर्यएति विश्व दृष्टों अदृष्टहा।अदृष्टांतसर्वा जम्भयनत सर्वाश्च यातुधान्य।।**(4) **(ऋग्वेद 1.191.8)**

समीक्षात्मक सिंहावलोकन

विभिन्न पर्यावरणविद् तथा ऋषि-मुनियों द्वारा रचित पुस्तकों,वेदों तथा ग्रंथो के पूर्व अध्ययनो की समीक्षा के अन्तर्गत **भांडारकर(1915)**ने बताया कि हिंदुओं ने पवित्र नदियों को अपनी देवी, जंगल

बिहार शोध समागम

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

को देवता, टोटम जानवर को भाई तथा शिकार प्रजाति को नश्वरता के रूप में मानते हुए सामाजिक एवं प्राकृतिक वातावरण से अपने संबंधों को बढ़ाया है । पारंपरिक हिंदुओं का मानना है कि पेड़-पौधे मानव जाति को शांति,सुख-समृद्धि और सांत्वना प्रदान करते हैं।

दास गुप्ता (2003) के अनुसार- हिंदू घरों में पीपल का पेड़ सदैव से ही पूज्यनीय रहा है तथा ऐसा माना जाता है कि इसकी शाखाओं को काटने से उनके वंश की समाप्त हो जाती है।भगवत गीता के पन्द्रहवें अध्याय में एक स्थान पर संसार को उल्टा पीपल का वृक्ष कहा गया हैं तथा कहा जाता हैं कि जिसे इस उल्टे वृक्ष के तत्त्व का ज्ञान हो जाता हैं वह समस्त वेदों का ज्ञाता होजाता है।**ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥**(5) **गीता(15.1)** अर्थात ऊपर की ओर जड़ तथा नीचे की ओर शाखा वाले इस संसार रूपी पीपल के वृक्ष को परम सत्य कहते हैं और वेद इसके पत्ते हैं, उस संसार रुपी वृक्ष को जो जान जाता है,वह सारे वेदों को ज्ञाता हो जाता है।

त्रिवेदी (2004) ब्रहमांड में विद्यमान ईश्वर वायु,जल,अग्नि और वृक्ष तथा जड़ी बूटियां में भी रहता है अत:मनुष्य को उनके प्रति श्रद्धा रखनी चाहिए।**वृहदारणयक उपनिषद (3.9.28)**6 में वृक्षों को मानव के समान ही समानता प्रदान की है **अध्ययन का उद्देश्य**

पृथ्वी, जल,वायु,अग्नि तथा आकाश इन पंचतत्वों के संरक्षण एवं संवर्धन से संबंधित यह लेख इस उद्देश्य एव तथ्यों पर आधारित माना जाता हैं कि विश्व का सबसे प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद है जिसकी प्रारंभिक ऋचाओं से ही ऋषि-मुनि पवन, भूमि, सूर्य,वनस्पति अर्थात प्रकृति के मुख्य कारकों को प्रणाम करता है ।वैदिक आचार्य पृथ्वी नदी और वनस्पतियों को मां और पुत्री की तरह सम्मान देता है ।अथर्ववेद का ऋषि वनस्पतियों को पूजनीय मानता है। उपनिषद में पृथ्वी,जल,वायु और आकाश से जीवन की उत्पत्ति मानी गई है। अतः शुद्ध पर्यावरण जीवन के लिए आवश्यक है तथा पर्यावरण के संतुलित होने से ही जीवन का विकास संभव है। इसका तथ्य परक विश्लेषण किया गया है।

विधितन्त्र

वर्तमान शोध अध्ययन प्राचीन वेदों में वर्णित पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन से संबंधित विचार के विविध पक्षों के अन्वेषण से जुड़ा है जो वर्णनात्मक,विश्लेषणात्मक,ऐतिहासिक आलोचनात्मक अध्ययन पद्धति तथा द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इस शोध पत्र के लिए मूल अध्ययन स्रोत को शोधपत्रों,पत्र-पत्रिकाओं एवं दस्तावेज विभिन्न आचार्य द्वारा लिखित पुस्तकों तथा वेद ग्रंथ द्वारा लिया गया है।

पृथ्वी तत्व

अथर्ववेद(**12.1.12**) में पृथ्वी को माता तथा मानव को उसका पुत्र कहा गया।**यत्ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं, यास्त ऊर्जस्तन्वद संबभुवु:। तसुनो धेहयभि न: पवस्व, माता भूमि: पुत्रों अहं पृथिव्या:।** (7)श्लोक में बताया गया है कि बेटा जिस प्रकार अपने माता-पिता की रक्षा करता है उसी प्रकार से उसे धरती रूपी माता की भी रक्षा यत्न पूर्वक करनी चाहिए। अथर्ववेद में बार-बार इनके दोहन न करने की

ओर संकेत किया गया है। आज मानव हर परिस्थिति में लाभ पाना चाहता है चाहे वह धरती का अधिक से अधिक दोहन क्यों ना करके प्राप्त किया जाए। इसके भीतर या बाहर जो कुछ भी अमूल्य वस्तुएं वह उन सबको धरती से छीन लेना चाहता हैं।

यजुर्वेद(13.18) में कहा है "पृथ्वी को दृढ़ करो इसकी हिंसा ना करो" **पृथिवी दृढ़ पृथिवी मां हिंसी** (8)अर्थात वृक्षों के काटे जाने पर पृथ्वी की धड़कन में कमी आती है।वेदों में वृक्षों के काटने को निषेध किया गया है क्योंकि वृक्ष भी पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं यहां तक कि पेड़ पौधों की रक्षा के लिए इनको हमारी आस्था और संस्कृति से जोड़कर उनमें देवत्व का ज्ञान कराया गया है। कुश वृक्ष के लिए भगवान स्वयं कहते हैं **मम रोमा: समुद्रभवा।कुशमूले स्थितो ब्रहमा कुश मध्ये जनार्दन: कुशाग्रे शंकरो देवा त्रयो देवा कुशे स्मृता:।**अर्थात कुश मेरे रोंम से उत्पन्न है उसके मूल में ब्रहमा ,विष्णु तथा अग्रभाग में भगवान शिव का वास है।वेदों के अनुसार वृक्षों को देव स्वरूप मानकर अनेक प्रकार से इनकी स्तुति की जाती है।भगवत गीता में श्री कृष्ण ने स्वयं कहा है- कि वृक्षों में मैं पीपल वृक्ष हूँ। वेदों में वृक्ष लगाना परम आवश्यक मानकर वृक्षारोपण का स्पष्ट आदेश दिया गया है। **वनस्पतिं वन आस्थापयध्यम पृथिवीम अदृहीत** (9)वनों को नष्ट करना पृथ्वी माता को कष्ट पहुंचाना है जो इसके हृदय पर प्रहार करने जैसा है अत:वेदों को आदर्श मानकर हमें पृथ्वी तत्व का संरक्षण करना चाहिए (ऋग्वेद 10.101.11)

जल तत्व

जल ही जीवन का आधार है, या जल ही जीवन है। इस धारणा को ध्यान में रखते हुए के वेदों में भी स्वच्छ जल के प्रयोग की बात कही गई है,क्योंकि दूषित जल के प्रयोग से शरीर में कफ,वात,पित्त की स्थिति बिगड़ती है। जिससे स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता ।है स्वच्छ जल में अमृत एवं औषधि का निवास है। जल की सुरक्षा एवं संरक्षण से ही हमें स्वच्छ जल की प्राप्ति हो सकती है।ऋग्वेद में कहा गया है-**आपो हि स्था मयोभुवस्था न ऊर्जे दधातन**।।(ऋग्वेद मण्डल10 सुक्त 9)जल में समस्त रोगों तथा कष्टों को दूर करने की क्षमता होती है। मानव के शरीर का निर्माण प्रकृति के पंच महाभूत, जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी व आकाश से होता है। हमारे वेदादि शास्त्रों ने जल की महत्ता को स्वीकार किया हैं। जल सामुद्रिक जीव-जगत,वनस्पति तथा सभी मनुष्यों के लिए उपयोगी है।इसलिए **अथर्ववेद की 6.23** जल सूक्त में जल का आहवान करते हुए जल की सर्वव्यापकता की चर्चा की गई है।जल ही मनुष्य को कर्म में प्रेरित करने वाला बताया है तथा जल ही मनुष्य को निकृष्ट गति से उत्तम गति दिलवाता है एवं प्रगति की ओर ले जाता है। **स्सुर्षीस्तदपसो दिवा नक्त च ससुषि: वरेणयक्रतुरूपमो देवी रूप हवय।।ओता आप: कर्मण्या मुशचनितवत प्रणीतये।सद्य: कर्णवनत्वेतवे।।**11इसी सूक्त के अंतिम मंत्र में जल तथा जल से उत्पन्न हुई औषधियाँ हमारा कल्याण करें यही कामना की गई है। **अथर्ववेद (6.24)**सूक्त में जल चिकित्सा का स्पष्ट वर्णन मिलता है। नदियों के जल में भी अनेको औषधीय गुण विद्यमान है जिनका उपयोग करना मनुष्य का धर्म है साथ ही अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य को यहां इसलिए

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

भी जल संरक्षण संवर्धन हेतु प्रेरित किया गया है कि वह जल को दूषित कर उसके गुणों का नाश न करें।12

आप इदा उ भेषजी रापो अमीवचातनी आप सर्वस्व भेषजी स्तास्ते करणवंतु भेषजम।। 13 **(ऋग्वेद 10.137.6**)मंत्र जल के संबंध में बहुत ही अधिक महत्वपूर्ण है। यहां अमीव नामक रोगाणु का नाम आया है। तथा जल का औषधीय गुण उसका नाश करने में समर्थ है। जल दूषित ना हो इसलिए **तैतितरीय आरण्यक 1.2.7** में कहा गया है कि जल में मलमूत्र त्याग नहीं करना चाहिए। **नप्सु मूत्रपुरीष कुर्यात।**14 अथर्ववेद में जल को अमृत एवं औषधि के गुणों से युक्त बताया गया है।**अप्सवंतरमृतमप्सु भेषजम।।** 15 **अथर्ववेद 1.4.4**

आज मनुष्य ने अपने विकास की लालसा में जल के सभी स्त्रोतों को भी दूषित कर डाला है। पवित्र गंगा के उत्पत्ति स्रोत गौमुख जहां से गंगा निकलती है वह भी दूषित हो चली है। पर्यटन के कारण तरह तरह के उद्योग होटल आदि ऐसे स्थानों पर अवस्थित हो रहे है जिनसे वातावरण दूषित होता चला जा रहा है।**अथर्ववेद** में सभी प्रकार से जल की स्वच्छता एवं सुरक्षा बनाए रखने के लिए प्रार्थना की गई है।वर्षा, कुआं,समुद्र और धरती से स्वयं प्रस्फुटित जल हम सभी के लिए कल्याणकारी है।पर्यावरण के महत्वपूर्ण घटक जल को प्रदूषण से बचाव के लिए वैदिक ऋषियों ने जल को ही देवत्व की संज्ञा दी है।जल ही स्वयं ईश्वर है ऐसा कहकर मानव अंतः करण में भी जल के लिए आदर् सम्मान एवम सुरक्षा उत्पन्न करने के प्रयास किए गए हैं।श्रीमद् भागवत गीता में जल को भगवान ने स्वयं अपना स्वरूप बताया है।**सरसामसिम सागर:स्त्रोत सामस्सिम जहानवी ।।**16**(भगवत गीता 7.8-9)**

अग्नि तत्व (तेज:)

अग्नि की उत्पत्ति जल से मानी जाती है। जिस तरह जल हमारे शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है, उसी तरह अग्नि भी ऊर्जा के रूप में शरीर में विद्यमान है। अग्नि के कारण ही शरीर चलायमान होता है। अग्नि तत्व ऊष्मा, शक्ति, ऊर्जा और ताप का प्रतीक है। जिससे हमारे शरीर में गर्मी होती है।यही तत्व अधिकांश रूप से शरीर को निरोगी रखता है।साथ ही इससे बल और शक्ति प्राप्त होती है।ऋग्वेद में अग्नि को पिता के समान कल्याण कारक कहा गया है।वैदिक परंपरा के अनुसार पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए पर्यावरण के प्रमुख प्राकृतिक घटक अग्नि तत्व की महत्वपूर्ण भूमिका है।जिस प्रकार से हमारा शरीर तेज तत्व के बिना निरर्थक है ठीक इसी प्रकार से बाह्य जगत भी अग्नि तत्व के बिना उदासीन है।अग्नि तत्वों का पर्यावरण के शुद्धता में विशेष योगदान बताया गया है। **अग्नेसूनवे पिता इवं न: स्वस्तये आ सचस्व अथर्ववेद में** वेदों का शुभारंभ ही अग्नि के सत्वन से होता है।वैदिक ऋषि ने अग्नि को माध्यम बनाकर यज्ञ की विधाओं द्वारा पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण को शुद्ध करने के लिए मानव को वेद के माध्यम से सचेत किया हैं।वास्तव में यज्ञ प्राकृतिक क्रिया के संतुलन की प्रक्रिया है।वैज्ञानिकों ने इस सत्य को स्वीकार किया है कि यज्ञ के माध्यम से वातावरण में उपस्थित कार्बन डाइऑक्साइड और ऑक्सीजन का संतुलन स्थापित किया जा सकता है।जिस प्रकार कर्मकांडी

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

यज्ञ प्रकृति चक्र तथा वातावरण शुद्धि के लिए आवश्यक है।उसी प्रकार से श्रमात्मक भावात्मक यज्ञ अन्त:शुद्धि के लिए आवश्यक है।अथर्ववेद में लिखा है कि यज्ञ की अग्नि विविध कष्टों को दूर करने वाली महान औषधि हैं। यज्ञ में सामाजिक एवं मानसिक प्रदूषण का भी समाधान बताया गया है। अग्नि में आहुतियां अर्पित करना ही यज्ञ नहीं है बल्कि यज्ञ एक ऐसी भावना है जो समस्त पर्यावरण को प्रभावित करती है और सुवासित करती है।वायुमंडल में विद्यमान वायु को शुद्ध करने के लिए यज्ञ का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है।वैदिक संस्कृति में विभिन्न यागो और अग्निहोत्रो का उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण ही है जो सर्वश्रेष्ठ उपाय है।ऋग्वेद में वर्णित है कि यज्ञ से आयु,प्राण,ज्योति,आकाश सभी शुद्ध होते हैं।स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने भी लिखा है कि होम अथवा यज्ञ करने से पवन और वर्षा जल की शुद्धि से पृथ्वी के सभी पदार्थों की उत्तमता में वृद्धि होती है ।उसी से सब् जीवों को सुख प्राप्त होता है और ईश्वर उन पर कृपा करते हैं।वेदों में वर्णित हैं कि यज्ञ श्रेष्ठतम कर्म है।यज्ञ के आयोजन से पृथ्वी पर पर्यावरण की शुद्धि होती है।यज्ञ और पर्यावरण संरक्षण के बीच विभाज्य संबंध है।इस पृथ्वी पर यज्ञ में वातावरण में ही सर्वाधिक विकास परिलक्षित होता है।हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने मानव जाति के लिए जो धर्म बताए हैं वह यज्ञ से ही प्रेषित हैं।यज्ञ न केवल इस लोक में बल्कि परलोक में भी मोक्ष प्राप्त करने में सहायक है।**मनुस्मृति** में वर्णित है कि यज्ञ में डाली गई वस्तुएं आहुति रूप में सूर्य तक पहुंचती है सूर्य से वर्षा होती है वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है जिससे प्रजा की रक्षा होती है। **अथर्ववेद** में कहा गया है कि गूगल औषधि की उत्तम गंध विभिन्न रोगों तथा आक्रोश को नष्ट करती हैं।यज्ञ से निकले हुए धुएं का विश्लेषण करने पर वैज्ञानिकों ने पाया कि जलती हुई शक्कर में वायु शुद्ध करने की क्षमता पाई जाती है, और इसके धुंए में क्षय,चेचक तथा हैजा आदि बीमारियों के कीटाणु नष्ट करने की क्षमता है।मुनक्का किशमिश आदि फलों के धुंए में टाइफाइड के रोग कीटाणु मारने की क्षमता होती है।घी चावल में केसर मिलाकर अग्नि में आहुति देने से विभिन्न रोग कीट मर जाते हैं इस प्रकार मानव जीवन में यज्ञ से पर्यावरण संरक्षण का घनिष्ठ संबंध है।श्रीमद् भागवत गीता में योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण ने यज्ञ को सर्वोच्च रूप में बताया है।

वायु तत्व

वातावरण को शुद्ध करने वाला तत्व जीवन का आधार वायु ही है।**इसका संरक्षण पर्यावरण के लिए अत्यंत आवश्यक** है। ऋग्वेद में एक स्थान पर कहा गया है **'महम वात पवताम'** वायु मुझे पवित्र करें। **अथर्ववेद** में **आपो वाता औषधिय:** कहकर यह निर्देश दिया गया है कि पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के लिएवायु की शुद्धि पर ध्यान देना अति आवश्यक है।अथर्ववेद में बताया गया हैं किवायु संसार की रक्षक के रूप में सभी प्रकार के रोगों को नष्ट करती है।17 **अथर्ववेद(4 .25 .1-7)**

युवं वायो सविता च भुवनानि रक्षथ:।18 **अथर्ववेद(4.25.3)** वायु के महत्व का वर्णन करते हुए अथर्ववेद में वायु को दो गुणों से निहित बताया गया है प्राणवायु के द्वारा मनुष्य में जीवन शक्ति का संचारहोता है तथा अपान वायु के द्वारा सभी देशों को शरीर से बाहर निकाला जा सकता है इसीलिए

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

अथर्ववेद में वायु को विश्व भेषज कहा गया है। क्योंकि यह सभी प्रकार के रोगों और दोषों को नष्ट करती हैं।

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद् रप:।त्वं हि विश्वभेषज देवानां दूत ईयसे। 19 **(अथर्ववेद 4.13.3)** वायु के महत्व पर ऋग्वेद में वर्णित हैं कि हे वायु तुम्हारे पास अमृत का खजाना हैं तुम्ही जीवन शक्ति दायनी तथा सब रोगों की औषधि हो। **यददो वात ते गृहे अमृतस्य निधि निधिहितर तेन नो देहि जीवसे।**20 **ऋग्वेद (10.185.1-3)** ऋग्वेद के एक महत्वपूर्ण मंत्र में यह कहा गया हैं कि वायु में अमृत अर्थात ऑक्सीजन विद्यमान रहती है।इसलिए इसे नष्ट नहीं होने देना चाहिए। अर्थात् हमे ऐसा कोई कार्य नही करना चाहिए जिससे वायु में ऑक्सीजन की कमी हो।एक लोकोक्ति है कि जब तक सांस है तब तक आस है परंतु जब सांस ही जहरीली हो जाए तब उससे जीवन की कल्पना किस प्रकार की जा सकती है इसलिए सांस के सार्थकता वातावरण की मुक्ति में निहित है।

आकाश तत्व

भारतीय तत्त्वदर्शन वैदिक काल से ही मानता और जानता रहा कि आकाश एक महत्त्वपूर्ण शक्तिशाली तत्त्व है। शेष 4 तत्त्व वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी क्रमशः आकाश के ही स्थूल रूप हैं। आकाश-तत्त्व ईश्वर या आत्मा की निकटता की दृष्टि से सर्वप्रथम है इसलिये उसकी शक्ति, ध्यान, फल भी अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। योग चूड़ामण्युपनिषद में कहा गया है-

तस्माज्जता परा शक्तिः स्वयं ज्योति रात्मिकाआतमन् आकाशः संभूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भयः पृथिवी। तेषाँ मनुष्यादीनाँ पंचभूत समवायःशरीरम्।21ब्रह्म से स्वयं प्रकाश रूप आत्मा की उत्पत्ति हुई। आत्मा से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि से जल, जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। इन पाँचों तत्वों से मिलकर ही मनुष्य-शरीर की रचना हुई है।" यह पाँच तत्व ही मिलकर शरीर के स्थूल और सूक्ष्म अवयवों का निर्माण करते हैं। इन तत्वों की स्थिति ही क्रमशः स्थूल से सूक्ष्म होती गई है। पृथ्वी से शरीर का विकास होता है। अग्नि से दृश्य की अनुभूति होती है। वायु से शरीर में प्राणों का संचार होता है गति एवं चेतनता आती है। आकाश-तत्त्व इन सब से सूक्ष्म अदृश्य एवं नियन्त्रक है।

आकाश-तत्त्व की व्याख्या करते हुये महर्षि वशिष्ठ लिखते हैं-

चिंताकाशं चिदाकाशं माकाशं च तृतीयकम्। दाभ्याँ शून्यतरं विद्धि चिदाकाशं वरानने॥
देश देशान्तर प्राप्तौ सविदो मध्यमेव यत्। निमेषेण चिदाकाश तद्विद्धि वस्वर्णिनि॥
तस्मिन्निरस्तनिः शेषसंकल्पस्थिति मेषि चेत्। सर्वात्मकं पदं तत्वं तदाप्नाष्यसशयम्॥
चित्ताकाश चिदाकाश याकाश च तृतीयकम्। विद्दयेतत्मयमेकं त्वमविनाभावनावशात्॥
22**(योगवाशिष्ठ3/17/10,12,13,19)**

अर्थात्-आकाश नाम का व्यापक तत्व आकाश, चिताकाश और चिदाकाश तीन रूपों में सर्वत्र व्याप्त है। चिदाकाश जो ज्ञान का आश्रय है सबसे सूक्ष्म है। एक विषय से दूसरे विषय की प्राप्ति के मध्य में क्षण भर का जो अवकाश अनुभव होता है वह चिदाकाश ही है। केवल वही संकल्प रहित है उसमें स्थिर हो

जाने से आत्मा परम तत्व या परमपद की प्राप्ति होती है। यह तीनों आकाश एक ही तत्व के त्रिगुणात्मक रूप हैं।

श्रोत्राकाशयोः संयभाद् दिव्यं श्रोतम् (भवति)23योगसूत्र (3-41) में इसी तत्व दर्शन का संकेत किया गया है। जिन दिव्य-ध्वनियों को आज तक विज्ञान नहीं पकड़ सका आकाश तत्व के वशित्व द्वारा उन्हें भारतीय योगियों ने करोड़ों वर्ष पूर्व ही जान लिया था। तात्पर्य यह है कि ब्रह्माण्ड में देवताओं या ईश्वर जैसी चेतन शक्तियाँ विद्यमान् है और उनसे मानसिक संपर्क स्थापित कर अनेक तरह की सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं।आकाश में तरंगें उत्पन्न करने वाले कण इतने सूक्ष्म होते हैं कि वे अस्तित्व में कब आते हैं और कब नष्ट हो जाते हैं इसका अनुमान भी नहीं किया जा सकता। डा०. प्राइस का कहना है कि जड़ पदार्थों में करोड़ों वर्ष पहले से ही इन चेतन किरणों का प्रभाव अभी भी विद्यमान् हैं। विज्ञान की गहराई की तरह आकाश की गहराई, शक्तियाँ , सिद्धियाँ भी अनन्त हैं, अर्थात जिस तरह आकाश अनंत है उसी तरह मन की भी कोई सीमा नहीं होती है। इसलिए आकाश तत्व को भौतिक रूप से मन भी कहा गया है। जिस प्रकार आकाश में बादल, धूल व रौशनी होती है। ठीक उसी तरह मन में भी सुख, दुख और शांति आदि सभी भाव उत्पन्न होते हैं। पर्यावरण में आकाश तत्व आत्मा का वाहक हैं तथा मन को नियंत्रित करके ब्रह्मांड और ईश्वर से जुड़ाव प्रदान करता है। यह पंचमहाभूतों (पाँच महान तत्वों) में से एक है। इसकी मुख्य विशेषता शब्द (ध्वनि) है।न्याय और वैशेषिक विचारधाराओं का कहना है कि आकाश ध्वनि की गुणवत्ता का आधार है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि पृथ्वी पर स्थित सभी जैविक तथा अजैविक तत्वों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रति

जागरूक या चेतन उत्पत्ति के प्रमुख स्रोत हमारे वेद-पुराण ही हैं। हमारे वैदिक ऋषि मुनियों ने हजारों वर्ष पहले ही वेदों में इस समस्या के लिए मानव समाज का मार्ग दर्शन किया है। जिनके अनुसार जैविक एवं अजैविक पारिस्थितिकी में पूर्ण सामंजस्य स्थापित करके ही पर्यावरण का संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सकता है।वेदों में लोक कल्याण की भावना निहित होती हैं इसलिए उन्होंने पर्यावरण सुरक्षा को धार्मिक आस्था से जोड़कर निरंतर संरक्षण एवं संवर्धन का मार्ग प्रशस्त किया है।पृथ्वी के प्रत्येक भाग में शांति की अभिव्यक्ति ही विश्व मंगल की बलवती इच्छा है। अतएव ऋषि मुनियों ने वेदों के माध्यम से पृथ्वी,वायु,जल,ओषधियों,अग्नि,आकाश तथा वनस्पतियों के प्रति जागरूक रहने हेतु प्रेरित किया हैं तथा इनमे होने वाली अशुद्धियों के प्रति सजक भी किया हैंजिसके द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकें।

BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal
issn : 3048-6971
Vol. 2, Issue 4, October-December 2024
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/

संदर्भ ग्रन्थ

1 जैन दर्शन के आचार्य श्री उमास्वामी/उमास्वाति -"तत्त्वार्थ सूत्र" ग्रन्थ अध्याय 5 श्लोक 21
2 मनुस्मृति अध्याय- 2
3 अथर्ववेद (12.1.12) बारहवां अध्याय(कांड) पृथ्वी सूक्त का बारहवां श्लोक
4 ऋग्वेद अध्याय(1.191.8)
5 भगवत गीता अध्याय (15.1)
6 वृहदारणयक उपनिषद (3.9.28)
7 अथर्ववेद(12.1.12)
8 यजुर्वेद(13.18)
9 ऋग्वेद(10.101.11)
10 ऋग्वेद मण्डल10 सुक्त 9
11 ऋग्वेद (1.169.3)
11 अथर्ववेद (6.23)
12 अथर्ववेद(6.24)
13 ऋग्वेद (10.137.6)
14 तैतितरीय आरण्यक (1.2.7)
15 अथर्ववेद (1.4.4)
16 भगवत गीता (7.8-9)
17 अथर्ववेद(4.25 .1-7)
18 अथर्ववेद(4.25.3)
19 अथर्ववेद (4.13.3)
20 ऋग्वेद (10.185.1-3)
21 योग चूड़ामण्युपनिषद
22 योगवाशिष्ठ(3/17/10,12,13,19)
23 योगसूत्र (3-41)
24 पद्मश्री डॉ कपिल देव द्विवेदी अथर्ववेद का सांस्कृतिक अध्धयन
25 हरिश चन्द्र व्यास(1993) संस्कृति एवं पर्यावरण पृष्ठ-152